गाँधी

संवाद, संचार और संदेश

प्रकाशक

राधिका बुक्स

बी-687/7, राजवीर कॉलोनी, घडौली
नई दिल्ली-110096
फोन : 09990790224
ई-मेल : radhikabooks2009@gmail.com
radhikabooks198@gmail.com
वेब-साईट : www.radhikabooks.com

ब्रांच ऑफिस

फ्लेट नं. 303, पेटेल्स रेसिडेन्स
प्लॉट नं. 5152, वेलकम सिटी
शाहबेरी, गौतमबुद्ध नगर-201308 (नोएडा)
फोन : 9643592549

गाँधी : संवाद, संचार और संदेश

© सम्पादक

प्रथम संस्करण : 2021

ISBN : 978-93-91819-05-7

मूल्य : 250/-

शब्द संयोजक : आदिल प्रिंटोग्राफिक्स

अनुक्रम

अपनी बात 11

1. लोकतांत्रिक मूल्यों का संवाद और गाँधीजी 15
   — *डॉ. फैजान अहमद*
2. गाँधी जी का मानवीय चेतना और अध्यात्म संबंधी संदेश 28
   — *डॉ. संजीव गुप्ता*
3. गाँधीजी की यात्राओं के संवाद और संदेश 37
   — *डॉ. रश्मि दीक्षित*
4. गाँधी की पत्रकारिता और संवाद की सर्वकालिक प्रासंगिकता 46
   — *संदीप भट्ट*
5. गाँधी की पत्रकारिता में जनजागरण के संदेश 57
   — *डॉ. उमेश कुमार*
6. गाँधीजी पत्रकारिता के राष्ट्रीय प्रतिमान 67
   — *डॉ. राजीव रंजन सिंह* एवं *डॉ. अवधेश नारायण मिश्र*
7. 'फेक न्यूज' के दौर में गाँधी की पत्रकारिता 83
   — *डॉ. प्रदीप डहेरिया*
8. गाँधी के गाँधी के संप्रेषण उपकरण और उनकी वैश्विक महत्ता 94
   — *प्रमोद सिन्हा*
9. गाँधीजी का जीवन एक विचार, दर्शन और संदेश 103
   — *श्यानी बुंदेला*

6

गाँधीजी पत्रकारिता के राष्ट्रीय प्रतिमान

डॉ. अवधेष नारायण मिश्र[1] *एवं डॉ. राजीव रंजन प्रसाद*[2]

आजादीपूर्व स्वराज के लिए प्रयास करने वाले राजनीतिज्ञों में गाँधीजी का कद बड़ा और सबसे अलग है। महात्मा गाँधी जनप्रियता के शिखरबिन्दु थे। हर क्षेत्र और अनुशासन में उनकी चर्चा आदरपूर्वक होती थी। उनके कहे का व्यापक प्रभाव और जन–जन तक असर देख सकते हैं। युगीन सम्पादकों ने गाँधीजी को हाथोहाथ लिया। पत्रकारिता में गाँधी युग का श्री गणेश हुआ। कुछ ख़ास बौद्धिक प्रवृत्तियाँ थीं जो गाँधी युग में तेजी से फैलीं तथा पत्रकारिता में अपने विशेष प्रभाव को अंकित करती चली गईं। राष्ट्रभाषा के मुद्दे पर भाषाई एकजुटता का समर्थन गाँधीजी ने खुलकर किया। डॉ. श्रीषचन्द्र जैसवाल गाँधी युग को रेखांकित करते हुए कहते हैं–"महात्मा गाँधी ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया था। स्वयं गुजराती भाषी होते हुए भी गाँधीजी ने हिंदी के व्यापक प्रचार–प्रसार को अपने राष्ट्रीय कार्यक्रम

---

1. बीते दो दशकों से भी अधिक समय से हिंदी पत्रकारिता आदि विषयों के शिक्षण–प्रशिक्षण और शोध क्षेत्रों में सक्रिय। मीडिया पर गंभीर दृष्टि के साथ लगातार अवलोकन करने वाले डॉ. राजीव वर्तमान में राजीव गाँधी केंद्रीय विश्वविद्यालय, अरूणाचल प्रदेश में हिंदी विभाग में असिसटेंट प्रोफेसर हैं।
2. हिंदी के सेवानिवृत्त प्राध्यापक हैं।

में सम्मिलित किया था। वे यह जानते थे कि हिंदी का आश्रय लिए बिना वह अपने आन्दोलन को राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान नहीं कर सकते थे। गाँधीजी द्वारा स्वयं हिंदी पत्रों का प्रकाशन इस बात का प्रमाण था कि वह हिंदी को कितना महत्त्व देते थे। 'हिंदी नवजीवन' और 'हरिजन सेवक' के माध्यम से गाँधीजी ने भारत के हर भाग में बसे हिंदीभाषियों तक अपने विचारों को पहुँचाने का प्रयास किया था।" भाषाई मुददे पर गाँधीजी हिंदी के पक्ष–समर्थन में खड़े थे। उनका दृढ़मत था कि राष्ट्रीय हित सर्वप्रमुख है। दरअसल, गाँधी की खुली दृष्टि उदार, समन्वयवादी थी और व्यापक राष्ट्रीय हितों के लिए क्षेत्रीय या जातीय हितों की कुर्बानी करने के लिए सदा तत्पर रहती थी। गाँधी इस बात को बखूबी जानते थे कि अनेक पत्र–पत्रिकाएँ ऐसी हैं जो जातीय, क्षेत्रीय, धार्मिक और भाषागत संकीर्णता से ग्रस्त थीं और उनमें कट्टरता की भावना स्पष्ट रूप से मुखरित होती थीं। ऐसे में गाँधीजी ने 'भाषा–सेतु' बनने का काम किया। उनकी भाषा सम्बन्धी स्पष्टता या कहें बेबाकीपन ने हिंदी के प्रति लोगों के दुराव और द्वंद्व को पाटने की न सिर्फ पूरी कोशिश की, अपितु राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी की स्वीकार्यता को आगे बढ़ाने का काम भी कारगर तरीके से किया। गाँधीजी की आलोचना प्रायः हिन्दुस्तानी–आंदोलन के पक्ष में होने के कारण की जाती है। यह अलग से बात करने का विषय है। लेकिन इस बात में सौ फीसदी सचाई है कि गाँधी हिंदी के पक्ष–समर्थन में स्वयं हिंदी में काम करते हुए खड़े थे। हिंदी भाषा की दावेदारी तथा इसके अखिल भारतीय स्वरूप को मजबूती प्रदान करने का प्रयास कर रहे थे।

गाँधीजी राजनीतिक मनुष्य ही थे, लेकिन उनका व्यक्तित्व विराट था। पत्रकारिता उनकी कर्मभूमि थी। उनके विचार–दर्शन, मत–अभिमत, समझ–चेतना, विवेक–दृष्टि को समझना हो, तो गाँधी के पत्रों की ओर मुड़ना और उन्हें देखना आवश्यक होगा। गाँधीजी युगीन चेतना को जगा सके। लोगों को एकजुटता का संदेश दे सके। विभिन्न मत–भिन्नताओं के बीच अपनी स्वतन्त्र विचारधारा स्थापित कर सके, तो उसमें उनकी पत्रकारीय प्रतिभा, कौशल, अर्हता और दायित्व–बोध का योगदान सबसे ज्यादा है। गाँधीजी के वैचारिक आंदोलन और ज़मीनी सक्रियता की बात अवश्य होनी चाहिए। राष्ट्रनिर्माण की दिशा में तत्कालिन पत्र–पत्रिकाओं की भूमिका एवं निष्ठा अद्‌भुत रही है। गाँधी के स्वराज को लेकर भाषाई चेतना विकसित करने का उत्तरदायित्व

स्वतन्त्रतापूर्व की पत्र–पत्रिकाएँ पूरी शिद्दत से निभा रही थीं। हर भाषा के अखबार में आजादी की बातें थीं। जोश और जुनून थे। अधिसंख्य सम्पादकीय इस उद्देश्य के साथ लिखे जा रहे थे कि जन–जागरण आधारित पूर्ण स्वराज की मांग हर एक भारतीय के कंठ में पैठ जाये। इसके लिए आवश्यक था कि यथार्थपरक ढंग से सही एवं उपयुक्त सूचना–सामग्री पहुँचाने के विकल्प को निर्बाध जारी रखा जाये। संवादहीनता की स्थिति न उपजे। जन–जागरूकता के लक्ष्य में बाधा न पड़े। हिन्दुस्तानी लोग अपने देश की मौजूदा हाल–हालात से रू–ब–रू हों। देश की आर्थिक दशा और उनके कारणों की खोज करने में उनकी सीधी और हस्तक्षेपकारी भूमिका हो। आत्म–मूल्यांकन का महती कार्य भी पत्रकारिता को खुद से ही करना था। स्वाधीनताकालीन पत्रकारिता की बड़ी खूबी थी कि वे बिना डरे, बिना झुके और बिना समझौता किए अपनी बात कह सकते थे। इस तरह की प्रवृत्तियों को सिरजने और विकसित करने का काम भारतीय पत्रकारिता से जुड़े लोगों ने पूर्ण निष्ठा से किया था। कई लोगों ने जनचेतना निर्माण के इस कार्य में अपना सर्वस्व होम कर दिया। कष्ट झेले।

दुर्गम या कहें कंटिकापूर्ण मार्ग पर चलना स्वीकार किया, लेकिन औपनिवेशिक सत्ता और अंग्रेजी शासन की खुली भर्त्सना करने से पीछे नहीं हटे। सीधे विरोध किया। यह अंतःचेतना या कहें आत्मबल पत्रकारिता के पुरोधाओं में जबर्दस्त रही। पंडित गंगाधर भट्टाचार्य, राजा राममोहन राय, पंडित युगल किशोर शुक्ल, राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रताप नारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बालमुकुंद गुप्त, महावीर प्रसाद द्विवेदी, गणेश शंकर विद्यार्थी एवं अन्य का योगदान प्रातःस्मरणीय है। ये सब पत्रकारिता के युगपुरुष कहलाये क्योंकि उनका योगदान अप्रतिम है। इस दृष्टि से देखें, तो उन्नीसवीं सदी में कलकत्ता में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना पत्रकारिता को आगे बढ़ाने और इस प्रवृत्ति को गति देने में 'प्रशिक्षण–केन्द्र' की भूमिका में रही। योरोपीय शिक्षा के साथ भारतीय भाषाओं का जिस तरीके से मेलजोल और साक्षात्कार हुआ उसकी परिणति पत्रकारिता में उत्तरोत्तर विकास के रूप में देखी जा सकती है। नवजागरण की धुरी पर भारतीय जनमानस में राजनीतिक चेतना का संचार हुआ। संगठित राजनीति की नई मनोवृत्ति बनी, जिसका कुल हासिल 1885 ई. में संस्थापित

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को माना जाना चाहिए।

आजादीपूर्व के दिनों में भारतीय राजनीतिज्ञों ने पत्रकारिता को गंभीरता से लिया। सम्पादक के गरिमामय जीवन तथा गौरवपूर्ण उपलब्धि को आदर्श माना। राजनीति से जुड़े लोग अखबारों की ताकत और उसके महत्त्व को भली–भाँति समझ रहे थे। मदन मोहन मालवीय, बाल गंगाधर तिलक जैसे नेताओं ने सशक्त, नैतिक तथा उच्च आदर्शों वाला पत्रकारीय मानदण्ड स्थापित किये और पत्रकारिता को गरिमामय ऊँचाई प्रदान की। महात्मा गाँधी जिस काल में पैदा हुए वह समय पत्रकारिता का भारतेन्दु युग था। गाँधीजी ने पत्रकारिता से प्रभावित होकर पत्र निकालना शुरू नहीं किए, अपितु उनके जन्मकाल से ही देश–काल–परिवेष ऐसा था जिस दौर में पत्रकारिता ने लोगों की चेतना को सर्वाधिक प्रभावित कर रखा था। महात्मा गाँधी ने 'यंग इंडिया', 'हरिजन', 'नवजीवन' के प्रकाशन का बीड़ा उठाया। ज्योतिश जोशी की एक पठनीय पुस्तक है 'साहित्यिक पत्रकारिता' शीर्षक से जिसमें वे लिखते हैं कि–"1918 से गुजराती तथा हिंदी में प्रकाशित होने वाले 'नवजीवन' का सम्पादन गाँधीजी ने अपने हाथों में ले लिया।

एक पत्रकार के रूप में गाँधी जी का लम्बा अनुभव 'नवजीवन' के सम्पादन में काम आया। ज्ञातव्य है कि जब वे दक्षिण अफ्रिका में थे तो उन्होंने 1903 ई. में 'इण्डियन ओपिनियन' का प्रकाशन किया था। यह पत्र हिंदी सहित तीन अन्य भाषाओं में प्रकाशित होता था–अंग्रेजी, गुजराती तथा तमिल। गाँधीजी ने 'यंग इंडिया' और 'हरिजन' के माध्यम से भी भारतीय पत्रकारिता की दिशा बदल दी थी। अंग्रेजी शासन को उनका कार्य तनिक नहीं सुहाता था, पर इनके माध्यम से गाँधीजी ने क्रांतिकारी कार्य संभव किए। गाँधीजी ने 1931 तक 'नवजीवन' का सम्पादन किया था। 'नवजीवन' में प्रति सप्ताह उनका आलेख प्रकाशित होता था जो जागरण का सन्देश जैसा होता था। 'नवजीवन' तथा 'हरिजन' में छपे गाँधीजी के आलेखों को देश के महत्त्वपूर्ण पत्रों और पत्रिकाओं में प्रकाशित किया जाता था। स्वाधीनता की प्रेरणा से लेकर जनता की समस्याओं और समाज की सड़ी–गली परम्पराओं पर लिखते हुए गाँधीजी ने देश को जहाँ एक महान लक्ष्य की ओर अग्रसर करने में सफलता पाई, वहीं हिंदी पत्रकारिता को एक नई दिशा भी दी।"

गाँधीजी का मूल व्यक्तित्व कई तरह की खूबियों से समादृत था जिसमें

पत्रकारिता उनकी आत्मा के चित्रपट थे। वह जो थे उसका दिग्दर्शन उनके पत्रों में लिखे टिप्पणियों, सम्पादकीय लेखों, स्वतन्त्र आलेखों आदि में होता है। कई दृष्टियों से गाँधीजी की छवि असाधारण थी। वे उच्च नैतिक मानदण्ड वाले नेता थे। उनकी स्वाभाविक प्रकृति सहिष्णु नेता की थी। गाँधीजी सत्ता के गलत निर्णयों के विरोध में नैतिक–बल से जुटाए समर्थन द्वारा बुलंद खड़े मालूम होते थे। पत्रकारिता में उनका अवदान स्तुत्य है। मोहनदास करमचन्द गाँधी उन गिने–चुने राजनीतिज्ञों में से हैं जिन्होंने पत्रकारिता के नट–बोल्ट कसे। पत्रकारिता को नई ऊँचाई तक ले गए। जनता की चेतना को सुगठित करने में उनका योगदान अहम रहा क्योंकि वे पत्रकारिता के राष्ट्रीय प्रतिमान बन चुके थे। उनके समाचार–पत्र राष्ट्रीय ही नहीं, अन्तरराष्ट्रीय सुर्खियों का विषय बनते थे। दुनिया भर की निगाहों में उनके कहे का ही नहीं, चुप्पियों तक का विशेष महत्त्व हुआ करता था। विदेशी भाषा के अखबार उनके कहे और लिखे का प्रकाशन अपनी भाषा के अखबारों में प्रमुखता से कर रहे थे। पूरी दुनिया में उन दिनों गाँधीजी की तूती बोलती थी। गाँधीजी सफल संचारक के रूप में लोकप्रिय थे। समाचार–पत्र से लेकर रेडियो की दुनिया तक उनकी पैठ एवं पहुँच जबर्दस्त थी। यह सब संभव कैसे हुआ? यह जानकारी आवश्यक है।

गणेश शंकर विद्यार्थी का गाँधीजी के प्रति विशेष आदर था। वे कहते थे–'अच्छा नेता वही हो सकता है जिसका अपना व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक दोनों ही जीवन सदाचार एवं नैतिकता से सम्पन्न हो।' गाँधी यों ही नहीं महात्मा थे। वे व्यक्ति की साधारणता में असाधारणता खोज लेते थे। विद्यार्थी जी की पत्रकारीय प्रतिभा और कौशल से वे पूर्णतया सुपरिचित थे। 25 मार्च, 1931 को बुरी ख़बर मिली जिसमें गणेश शंकर विद्यार्थी के मृत्यु की सूचना थी। गाँधीजी ने कहा–'गणेश शंकर विद्यार्थी को ऐसी मृत्यु मिली है, जिस पर हम सबको स्पर्धा है।' दरअसल, गाँधीजी कृत्रिम बनाव–शृ गार के आदमी नहीं थे। उनका सरलरेखीय जीवन अपनेआप में उदाहरण है। उन्होंने अपने जीवन और आचरण से यह सिद्ध कर दिखाया कि विजय सदैव सत्य और नीति की होती है। गाँधीजी स्वाधीनता आन्दोलन को जन–जन तक ले जा सके। जन–साधारण के साथ 'कनेक्ट' कर सके। उसके पीछे की प्रेरक शक्ति तद्युगीन प्रभाव भी थे।

पत्रकारिता जनमानस से गहरे संपृक्त थी। बौद्धिक–संवाद कायम करने और कारगर सेतु बनाने में वैचारिक पत्र–पत्रिकाओं की भूमिका प्रमुख रही। गाँधीजी इसी मार्ग से आगे बढ़े। विद्वानों की मानें, तो महात्मा गाँधी का शांति और सद्भावना का संदेश सबके लिए था, किसी विशिष्ट वर्ग या दल के लिए नहीं। लोकतंत्र, सामाजिक न्याय और सर्वराष्ट्रीयता के वे अनन्य साधक थे। वे हठधर्मी नहीं थे, किसी भी नए विचार को परखने के लिए वे सदा तैयार रहते थे। उनका इस बात में दृढ़विश्वास था कि वर्गभेदों और सामाजिक तथा आर्थिक विशमताओं को मिटाए बिना समाज में से हिंसा का उन्मूलन नहीं हो सकता।

गाँधीजी की उपासना या उन पर अंधास्था रखने की बजाय गाँधी को जानने–समझने की जरूरत आज कहीं अधिक है। उन्हें याद 'अहो रुपम, अहो ध्वनि' के सुरताल में नहीं किए जाने चाहिए। क्योंकि गाँधीवाद वैज्ञानिक मनोवृत्ति नहीं है; जीवन के प्रति इसकी नैतिक मनोवृत्ति है। गाँधीजी ने उस समय सूचनाओं के माध्यम से देश में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया, जबकि माध्यमों की कमी से जनसंचार जूझ रहा था। उस समय जनसंचार की कोई अधोसंरचना नहीं थी। दुनिया में सूचनाओं का संप्रेषण एक जटिल प्रक्रिया थी। आज सूचनाओं को भेजने के लिए माध्यमों की कोई कमी नहीं है। वैश्वीकरण की अवधारणा और उसकी सर्वमान्यता के कारण दुनिया एक हो गई और इसमें संचार माध्यमों ने बड़ी अहम भूमिका निभाई है।

इस दौर में उस समय की कल्पना की जानी चाहिए जबकि संसाधनों का अभाव था और आवश्यकताओं की कोई कमी नहीं थी। उस दौर में गाँधीजी ने कहा कि मैं पत्रकारिता सिर्फ पत्रकारिता करने के लिए नहीं करता, मेरा लक्ष्य है–सेवा करना। उन्होंने 2 जुलाई 1925 के 'यंग इंडिया' में लिखा– 'मेरा लक्ष्य धन कमाना नहीं है। समाचार–पत्र एक सामाजिक संस्था है। पाठकों को शिक्षित करने में ही इसकी सफलता है। मैंने पत्रकारिता को पत्रकारिता के लिए नहीं, बल्कि अपने जीवन में एक मिशन के तौर पर लिया है। मेरा मिशन उदाहरणों द्वारा जनता को शिक्षित करना है। नीति वाचन, सेवा करना और सत्याग्रह के समान कोई अस्त्र नहीं है, जो सीधे ही अहिंसा तथा सत्य की उपसिद्धि है।' उनका कहना था कि पत्रकारिता लोगों की भावनाओं को समझने और उनकी भावनाओं को अभिव्यक्ति देना है। अभिव्यक्ति देने में

सफल आदमी ही सफल संचारक हो सकता है। इस अवधारणा को आज संचार के सभी माध्यम और प्रकार भलीभाँति अपना रहे हैं। लेकिन आज प्रेस की आजादी और उसके आचरण पर कई सवाल उठ खड़े हुए हैं। उससे किस प्रकार से सही सूचना की अपेक्षा की जा सकती है? इस पर गाँधीजी ने प्रेस को गैरजिम्मेदार और अशुद्ध माना कि उसमें ऐसे व्यक्ति की गलत तस्वीर पेश की जा रही है। सही और न्याय देखने वाले को सिर्फ गलत राह दिखाई जा रही है।

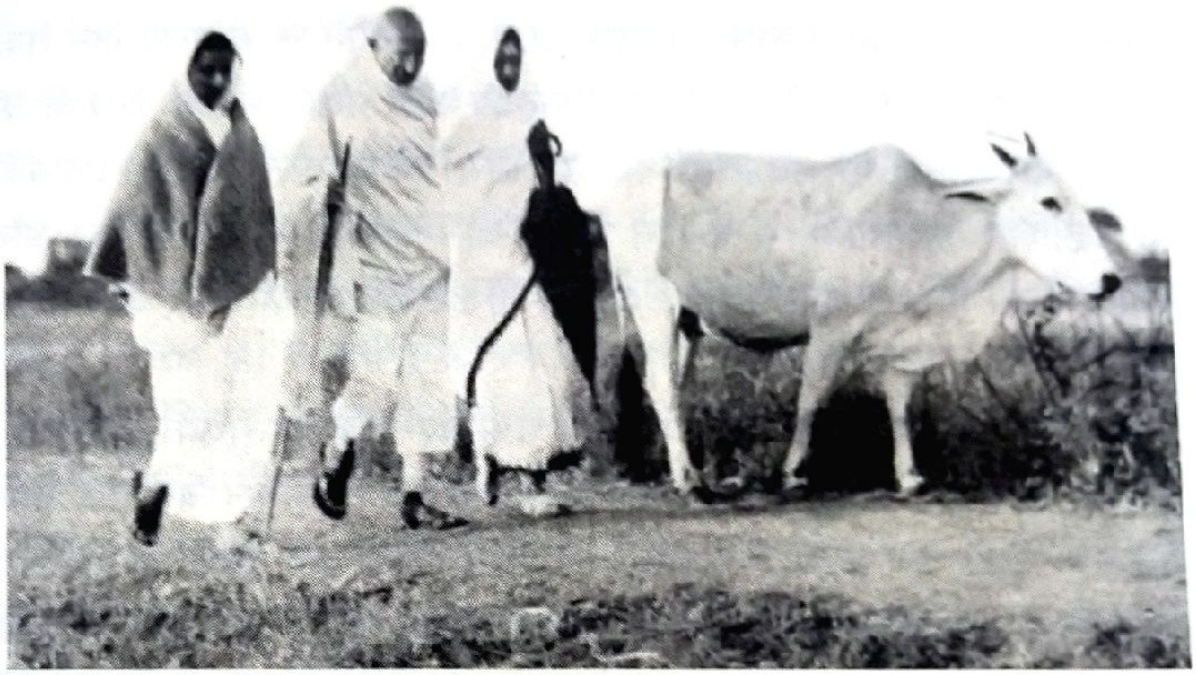

वर्धा में 1934 के एक दिल टहलते हुए बापू (साभारः mkgandhi.org)

महात्मा गाँधी न केवल एक राजनीतिज्ञ थे बल्कि जीवन के विभिन्न पहलुओं में उनका अच्छा–खासा हस्तक्षेप था। वे एक सफल नीति निर्धारक, अच्छे समाज सुधारक, कुशल अर्थशास्त्री तो थे ही, उनका विशेष गुण था, उनका उत्कृष्ट जन–संचारक होना। आज भारत में जनसंचार के विभिन्न माध्यम हैं। इनमें समाचार–पत्र, रेडियो, टेलीविजन, इंटरनेट प्रमुख हैं। आजादी के पूर्व बहुत सीमित संचार के साधनों के बाद भी गाँधी जी की लोकप्रियता जबर्दस्त थी। ऐसे समय में जब मुद्रण माध्यम अँगरेजी हुकूमत की निगरानी में था, गाँधीजी ने अपनी वैचारिक लहर गाँव–गाँव और शहर–शहर तक पहुँचाई। उनका सरल, सादी आम भाषा का प्रयोग और सबसे ज्यादा

बोली जाने वाली भाषा के प्रयोग ने जनसामान्य को उनके संदेशों से जुड़ने में सहूलियत प्रदान की। इंडियन ओपिनियन में गाँधीजी ने लिखा है–"व्यक्ति का प्रमुख संघर्ष आंतरिक है। वह आंतरिक शक्ति ही प्रेरणा देती है। यह कार्य समाचार–पत्र अच्छी तरह कर सकता है।" एक पत्रकार के रूप में उन्होंने सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक विचार प्रस्तुत किए, जिसमें बुद्धिजीवी वर्ग यथा वकील, शिक्षक, विद्यार्थी, पत्रकार, ट्रेड यूनियन नेता आदि ने उन्हें अपनी प्रेरणा का अजस्त्र स्रोत माना। जनसेवक गाँधीजी ने अपने व्यक्तित्व के प्रयास से स्त्री, पुरुष, शिक्षित, अशिक्षित, किसान, मजदूर, पूँजीपति, सभी को प्रभावित किया और देश की स्वतंत्रता के लिए सबको एक साथ पिरोने का कार्य किया। वे अपने विचार समाचार–पत्रों के माध्यम से सामान्य जन तक तो पहुँचाया ही करते थे, परंतु प्रेस स्वातंत्र्य और प्रसार संख्या में कमी के कारण पाठकों को भी अंतःप्रसार के लिए प्रेरित किया करते थे। अहमदाबाद से प्रकाशित 'सत्याग्रही' में उन्होंने लिखा था–"कृपया पढ़ें, कॉपी करें और अपने दोस्तों के मध्य प्रसारित करें और वे भी इसकी प्रतियाँ बनाएँ और प्रचार करें।"

'हरिजन' हो या 'यंग इंडियन' इन समाचार–पत्रों का मुख्य उद्देश्य ही ग्रामीण जन की भलाई तथा उनके जीवन–स्तर में आमूल बदलाव तथा तत्काल सुधार लाना था। सामाजिक सुधार, शिक्षाप्रद लेखों के अलावा गाँधीजी के समाचार–पत्रों में आगामी राजनीतिक कार्यक्रम, रणनीति आदि का भी विवरण होता था। महात्मा गाँधी इस बात से पूरी तरह अवगत हो चुके थे कि भारत जैसे बहुलतावादी देश में एक राष्ट्र की अवधारणा को बढ़ावा देने का कार्य एक कुशल संचारक ही कर सकता है। इसीलिए गाँधी जी ने जन–संवाद की प्रक्रिया हमेशा जारी रखा। दरअसल, गुलाम भारत में असली आजादी बिना किसी सुदृढ़ नेतृत्व के नहीं आ सकती थी; और सुदृढ़ नेतृत्व का निर्माता था एक सुदृढ़ जनसंचार माध्यम। ऐसे समय में गाँधीजी ने अपने व्यक्तित्व के प्रयास से स्त्री, पुरुष, शिक्षित, अशिक्षित, किसान, मजदूर, पूँजीपति, सभी को प्रभावित किया और देश की स्वतंत्रता के लिए सबको एक साथ पिरोने का कार्य किया। हम गौर करें, तो पाएंगे कि उनकी विचार–दृष्टि 'आर्थिक मानव' की जगह 'पूर्ण मानव' से संबंध रखती है।

गाँधीजी मानव और उसके पर्यावरण, मानव और मशीन, श्रम और पूंजी

तथा गाँव और नगर के बीच के संबंधों में आने वाली विकृतियों को दूर करने की प्रेरणा का संचार करते हैं।

गाँधी के विचार मुख्यतः भारत के लिए आवश्यक एवं प्राथमिक हैं; तब भी तीसरी दुनिया के देशों के लिए गाँधी सर्वथा उपयुक्त और स्वीकार्य माने जाने लगे हैं। इस घड़ी भारत औपनिवेशिक दासता से मुक्त हो कर विकास और निर्माण की सतत प्रक्रिया में जुटा हुआ हैं। ऐसे में उनके विचार अत्यन्त प्रासंगिक हो जाते हैं। गाँधीजी का मानना था कि उन तकनीकी अविष्कारों का कोई उपयोग नहीं, जो मनुष्य को अमानवीय बनाएं, जो उसे उसके काम से या उसके साथी कामगारों से काटें और जो यंत्रमानवों की एक सभ्यता पैदा करें, जिसमें आदमियों का एक समूह आसानी से दूसरों का इस्तेमाल अपने लाभ के लिए करे। गाँधी जी के लिए संदेश की शक्ति या फिर माध्यम की सत्ता बहुत महत्व रखते थे। वह साध्य और साधन दोनों की पवित्रता और उसके सही इस्तेमाल पर बल देते थे।

अतः संचारक के रूप में महात्मा गाँधी आज प्रत्येक भारतीय आत्मा की खास जरूरत हैं। वे सर्वमान्य नेता बन सके, तो इसके कई कारण अथवा विशिष्टता गिनाई जा सकती है। लेकिन जो सर्वप्रमुख है वह यह कि उनकी कथनी और करनी में कोई अंतर नहीं है। वह संचार साधनों से आम–आदमी का विकास चाहते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों की मूलभूत समस्याओं का समाधान चाहते हैं। जैसा कि हम वर्तमान समय में देख रहे हैं, गाँव और खेती का संबंध आज भी यथावत है, जबकि गाँव और उद्योग परस्पर विरोधी हो गए हैं। आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थतंत्र के बिखराव के कारण परम्परागत व्यवसायों में लगे करोड़ों लोगों के रोजगार का साधन लगभग छिन गया है।

उदाहरण स्वरूप अब बनारस बुनकरों के लिए नहीं जाना जाता। इस शहर का यह सांस्कृतिक पक्ष गौण हो चला है। इसकी जगह दूसरी चीजें उभर आई हैं या ज़बरिया उभारने का नव–साम्राज्यवादी खेल खेला जा रहा है। असल में, गाँधी जी जिन गाँवों की बात करते हैं, उस पर गहराई से और संवेदनशीलता के साथ विचार किया जाना अपेक्षित है। उनका मानना है, "हमें मानसिक रूप से गाँवों में वापस जाना चाहिए और उनसे सीखना चाहिए। नागरिक जीवन का आदर्श ग्रामीणों के सामने रखने के बदले, ग्रामीणों के जीवन को अपना नमूना बनाना चाहिए। वास्तविक विकास के लिए हमें गाँवों

की ओर मुड़ना होगा। उनके पूर्वग्रहों, उनके अंधविश्वासों, उनके संकीर्ण दृष्टिकोण को ख़त्म करना होगा, और ऐसा हम उनके बीच रहकर, उनकी खुशियों और दुःखों में भागीदार बनकर और उनमें शिक्षा और बौद्धिक सूचनाएं फैलाकर ही कर सकते हैं, किसी अन्य उपाय से नहीं।''

हर व्यक्ति से रचनात्मक भागीदारी एवं सक्रिय भागीदारी की माँग महात्मा गाँधी करते हैं। लेकिन उनके आग्रह में कहीं वाकपटु दुराग्रह नहीं है। जिस जन के साथ उनकी गहरी लगाववृत्ति और आत्मीयता है उन्हें वह अपने हृदय का काम सौंप देने को हमेशा इच्छुक रहते थे। गाँधीजी ने 'हिन्द स्वराज' के 'सत्याग्रह' वाले प्रकरण में बड़ी सटीक टिप्पणी की है कि–''दुनिया में इतने लोग आज भी जिन्दा हैं। यह बताता है कि दुनिया का आधार हथियार के बल पर नहीं; बल्कि सत्य, दया और आत्मबल पर है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि दुनिया लड़ाई के हंगामों के बावजूद टिकी हुई है। हजारों, बल्कि लाखों प्रेम के वश रहकर अपना जीवन बसर करते हैं। निःसंदेह लड़ाई या हिंसा–प्रतिहिंसा जैसी दुष्प्रवृत्तियाँ रही हैं। लेकिन अब तक न सिर्फ मानव, बल्कि मानवेतर प्राणी भी बचे हुए हैं, तो प्रेम सौहार्द, दयाभाव के कारण। त्याग, परहित, अहिंसा, प्रेम का आचरण करने वाले लोगों के जीवन को अवास्तविक या स्वप्निल के अर्थ में आदर्शवादी कहकर हरगिज़ खारिज़ नहीं किया जा सकता।''

आज की पत्रकारिता अपनी इन स्मृतियों पर गर्व करने लायक स्थिति में नहीं है। वह बिकाऊ और दिखाऊ इस कदर हो चली है कि विचार, विवेक, विश्लेषण, विश्वदृष्टि आदि की बातें बेमानी मालूम देने लगी है। पाठकीय दृष्टि से इस तरह की पत्र–संस्कृति राष्ट्रीय स्वाभिमान का सिर बूड़ना है। अतीत की उपलब्धियों को शर्मसार कर देना है। चाहे जो हो, पत्रकारिता इस लाँछन से बरी नहीं हो सकती है क्योंकि वर्तमान समय की पत्रकारिता में राष्ट्रीयता बोध और जवाबदेही का संकट सर्वाधिक है। सर्वसाधारण की चिंता और उसके प्रति सहज संवेदनशीलता का घोर अभाव है। पत्रकारिता बुनियादी लक्षण से दूर जा छिटकी है।

पत्रकारिता आज कारोबार है। पैसे कमाने की हवस है। पूँजी और सत्ता की पाट में पिसने को मजबूर है क्योंकि वह अपने इतिहास–बोध से कट चुकी है। बीती स्मृतियों से बावास्ता बिल्कुल नहीं है। सच कहें, तो पत्रकारिता की दुनिया के लिए यह समय जटिल अधिक है। अख़बार लुग्दी समाचारों से अटे

पड़े हैं। चॉकलेटी, नॉनस्टॉपी ख़बरों की आमद तो धुँआधार है। लिखने–पढ़ने का चलन आजकल बदला है। कागज़ रंगीन अवश्य हुए है। उनकी प्रस्तुति में 'वेरायटी' भी बहुत है। लेकिन विचार रंगहीन, गंधहीन, स्वादहीन हो चले हैं। जनपक्षधर–मूल्य और जनसरोकारी संवेदना धुंधली परछाई की तरह मटमैले आइकॉन हैं जिनमें मूल 'इसेंस' नदारद है। ऐसे में गाँधीजी की पत्रकारिता का हाशिए पर जाना तय है। इस निष्कासन के लिए सब जिम्मेदार हैं, लेकिन इसे सहजतापूर्वक मान और स्वीकार लेना आसान नहीं है। पत्रकारीय बिरादरी में भी स्तरहीन पत्रकारिता पर कोई आलोचनात्मक रुख नहीं दिखाई देते हैं। प्रभाष जोशी की चिंता और बेचैनी 'पेड न्यूज़' को लेकर थी। इसको लेकर उन्होंने देश भर की यात्रा की।

पत्रकारीय बिरादरी में घूम–घूम कर कहा कि यह नया 'ट्रेंड' पत्रकारिता को ख़त्म करने की क़ीमत पर प्रकट हुआ है। उनकी मृत्यु के बाद इस ओर से ध्यान जाता रहा। सब मोटी बात ही कहते रहे। ऊपरी दबाव बनाने में ही जुटे रहे। इस दिशा में परांजपे गुहा ठाकुरता की छानबीन–पड़ताल आश्वस्तिपूर्ण तथा संवेदनशील कही जानी चाहिए। बाहरी–भीतरी दबाव के बावजूद ठाकुरता ने रिपोर्ट तैयार की, लेकिन उसे ठंडे बस्ते में डाल दिया गया। प्रभाष जोशी हों या परांजपे; दोनों गाँधी के घोषित अनुयायी नहीं थे। हार्डकोर गाँधीवादी हरगिज़ नहीं। दोनों अपने–अपने तरीके से गाँधीजी की सोच से सहमति रखते हैं। गाँधीजी मानते थे कि–आमजन का रक्षा–कवच यदि कोई हो सकता है, तो वह सिर्फ पत्रकारिता है। जन–मन का गान पत्रकारिता द्वारा ही संभव है।

गाँधीजी पत्रकारिता में लम्बी लकीर खींचे, लम्बे डेग भरे। उनके तदयुगीन प्रभाव को देखते हुए गाँधीयुगीन पत्रकारिता का कालखंड बना जिसके मुख्यकर्मी गाँधीजी स्वयं थे। उनके पत्र आज भी उदाहरण हैं। यथाः। समाचार–पत्रों के माध्यम से गाँधीजी अपनी बेबाक राय रखते थे। तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त करने में वे क्रांतिकारी स्वभाव के न रहे हों, लेकिन उनकी बात में स्पष्टता थी। निर्णय में सफाई था। उनकी वैचारिक निष्ठा असंदिग्ध थी क्योंकि वे भारतीय जनमानस के नायक की भूमिका में थे।

पत्र–पत्रिकाओं में या कि अन्यत्र विभिन्न मुद्दों के प्रति उनकी सोच कैसी थी, वे उस बारे में क्या सोचते थे; उनके लिखे सम्पादकीय टिप्पणियों

से जगजाहिर है। गाँधीजी फुलटाइमर पत्रकार नहीं थे, लेकिन उनमें पत्रकारिता का शीलगुण जबर्दस्त था। गाँधीजी ने नसीहत नहीं दी, लेकिन पत्रकार–बंधुओं को दायित्व–निर्वहन का पाठ अवश्य पढ़ाया। आज भी आखिरी आदमी के चेहरे को याद रखना और उसके बारे में सोचना बिना गाँधीजी के जंतर को आत्मसात किये हुए संभव नहीं है। अपने समय से आगे की सोच रखने वाले गाँधीजी दूरदर्शी व्यक्ति थे। वे अखबार की ताकत बखूबी समझते थे। उन्हें भली–भाँति पता था कि किसी भी जनतांत्रिक राष्ट्र में संचार–प्रणाली की हैसियत क्या है और क्या होने चाहिए?

वैसे भी अंग्रेज रहे हों या हिटलर जैसे तानाशाह, सबको यह मालूम था कि सैन्य शक्ति के अलावा असली सत्ता जनसंचार में निहित होती है। गाँधीजी पत्रकारिता से जुड़े, तो उनके मंसूबे साफ थे। उनकी दृष्टि में पत्रकारिता मूल्य–सृजन और जनमत–निर्माण की अनुशंगी कार्यशाला थी जिसको लेकर उन्होंने अथक प्रयास किए। पूरे युग पर उनका प्रभाव पड़ा। गाँधीयुगीन पत्रकारिता में गाँधीजी के हाथ में खुद पत्र रूपी गांडीव थे। कई बार जानकारी का सही सिरा न पकड़े होने के कारण कई सारी भ्रांतियाँ हमारे मन में होती है। हम यह मान लेते हैं कि वे जनप्रिय थे इसलिए सब उनकी सुनते थे या कि उनके कहे का अनुसरण करते थे।

दरअसल, गाँधीजी सत्य और अहिंसा के उपाधिधारी उपासक मात्र नहीं थे, बल्कि यह उनके मन–प्राण में रची–बसी आत्मा की प्रतिमा थी जिस पर पूर्ण समर्पण के अमिट छाप अंकित थे। इसी तरह जनपक्षधरता के मुद्दे पर पत्रकारिता उनका मुख्य हथियार बन चुका था। स्वभाव से निर्भीक और व्यवहार में आत्मीय गाँधीजी यह मानते थे कि पत्रकारिता सिर्फ निष्ठा और निश्पक्षता की पैरोकारी करके नहीं की जा सकती है। इसके लिए जन–मन से गहरे लगाव होने आवश्यक हैं। वैचारिक सरोकार की बात सर्वोपरि है, लेकिन यह भी सिर्फ संवादी अथवा विमर्शात्मक मात्र न हो। सम्पादकीय अर्हता की मुख्य कसौटी लोक–व्यवहार का अनुग्राहक होना है। यह उपलब्धि भाषा द्वारा ही संभव है। गाँधीजी ने जनता की भावना को समझने हेतु जन–मन की भाषा को गले लगाने की बात कही। हिन्दुस्तानी को लेकर वे आग्रही इन कारणों से अधिक थे। उनका भाषा से रागात्मक जुड़ाव था। गहरी मित्रता थी। हिंदी को लेकर गाँधी ने व्यापक अभियान छेड़े। राष्ट्रभाषा

के मुद्दे पर पत्र–पत्रिकाओं में निरन्तर लेखन किया। सार्वजनिक मंचों से बोलने में हिचके नहीं।

गाँधीजी पत्रकारिता के प्रेरक–पुरुष बने तो इसके पीछे उनके 'मन–वचन–कर्म' की विश्वसनीयता का योगदान अन्यतम है। वे करोड़ों भारतीय–मन तक पहुँच सके और उन्हें प्रभावित कर सके तो इसके पीछे उनके कथनी तथा करनी में समानता का होना प्रमुख है। गाँधीजी व्यवहारकुशल थे, लेकिन अपने बात पर सदैव अडिग रहने वाले योद्धा थे। गाँधीजी ज़बान और उसूल के पक्के थे। मोहनदास नैमिषराय बाबा साहेब भीमराव आम्बेडकर के व्यक्तित्व पर लिखते हुए गाँधीजी के स्वभाव की चर्चा करते हैं। वे बताते हैं–'सचमुच गाँधी अड़ियल थे और बेहद जिद्दी भी। धरती को भी पकड़ लें तो छोड़े नहीं। भले ही हर प्रकार का विसर्जन वहीं करना पड़े।' समाचार–पत्रों से उनका जुड़ाव गहरा तो सम्बन्ध घनिष्ठ थे। राजनीतिक आन्दोलन को गति देने और आजादी की लड़ाई को मजबूत करने के लिए गाँधीजी ने वैचारिक समर्थन जुटाने का काम उन्होंने पत्रकारिता का बागडोर थामकर किया। समाचार–पत्र के प्रकाशन की खुद नींव रखी। गाँधीजी पत्रकारिता के नज़ीर बने और राष्ट्रीय आन्दोलन को दिशा देने का काम प्रमुखता से किया। पूरे देश को आलोड़ित करने और जन–जन में राजनीतिक चेतना को उपजाने में गाँधी की पत्रकारिता ने उर्वर ज़मीन बनाने का महती कार्य किया। उन्होंने रेडियो से अपनी बात करोड़ों–करोड़ भारतीय जन तक पहुँचाया।

31 जनवरी, 1947 को उन्होंने लखनऊ रेडियो से कहा कि–'जो भारतवर्ष के भविष्य के लिए सचेष्ट हैं, जो चाहते हैं कि उसकी उन्नत अवस्था हो, जो उसको आज पतन की अवस्था से बचाना चाहते हैं, उनका यह कर्तव्य है कि वे संघबद्ध होकर, इस राजनीति के पचड़े को छोड़ना हो तो उसको भी छोड़कर, इस देश में एक ऐसे जीते–जागते सांस्कृतिक आन्दोलन का प्रचार करें, जिस आन्दोलन के बल पर उनकी शिक्षा इस देश में टिक सके। प्रार्थी हूँ कि भारतवर्ष में, ऐसे विशाल देश में, जहाँ अनगिनत लोग बसते हों, यहाँ के नर–नारियों में थोड़े से लोग अवश्य होंगे जो आज की परिस्थितियों से उठकर साम्प्रदायिक शान्ति के लिए चेष्टा करेंगे। और यदि ऐसा हुआ तो हमारा भविष्य उज्ज्वल है, इस देश का कल्याण होने वाला है।'

गाँधी के आरंभिक पत्र 'इंडियन ओपेनियन' की लोकप्रियता उन दिनों

जबर्दस्त थी। बावजूद वह आज के संचार माध्यमों द्वारा अपनाये जा रहे नीतियों के पक्ष-समर्थक नहीं थे, जिसमें किसी राष्ट्र का सांस्कृतिक गौरव, राजनीतिक परंपरा और प्रभुसत्ता ही दांव पर लगा दी जाए। दरअसल, भारत जैसे विकासशील देश में संचार की परिकल्पना तथा नए समाज के निर्माण की अवधारणा गाँधी-नेहरू की दृष्टि से की जानी चाहिए न कि औपनिवेशिक मानसिकता अथवा हिटलरशाही 'अप्रोच' से। ध्यातव्य है कि आधुनिक संचार की अच्छाइयाँ बहुत ज्यादा हैं, संचार आधारित समाजीकरण से उपजी नवाधुनिक प्रवृत्तियाँ बेहद यथार्थपूर्ण व वास्तविक हैं। बावजूद इसके संचार के मौजूदा रवायत को भाषा और संस्कृति की दृष्टि से देखना और उन्हें प्रश्नांकित किया जाना इसलिए भी जरूरी है; ताकि संचार के अकूत ताकत और गतिशीलता के बरास्ते असंगत-अनावश्यक चीजें घुसपैठ न कर बैठें, अपना वर्चस्व न जमा लें।

पत्रकारिता इन दिनों जिस बेतरतीब ढंग से बदल रही है अथवा जिस ढर्रे पर गतिमान है, बेहद ख़तरनाक है। पत्रकारिता की नयी रवायत ईमानदार नहीं कही जा सकती है। अब प्रतिबद्धता की बात पत्रकारिता नहीं करती है। क्योंकि आज समाचार-पत्रों की लोकप्रियता के प्रतिमान दूसरे हैं। लोकगत कसौटियाँ कुछ और हैं। आज का पाठक-वर्ग 'अनवांटेड' और 'प्लांटेड' समाचारों के बटोर से हर दिन गुज़र रहा है। उसके मन का थाह लेना जरूरी है। फिक्र करना आवश्यक है। पाठकीय चेतना पर यथार्थ और विभ्रम का बोझ गठर की तरह लाद दिया गया है। उस पर जो बीत रहा है उसकी बात कहीं नहीं हो रही। बस राग अलापने में सभी अलमस्त हैं। जबकि गाँधीजी राष्ट्र के आखिरी आदमी की सुध लेने की बात करते थे।

पत्रकारिता से उनका आशय लाभ-हानि का मसौदा नहीं था। जबकि आज मुनाफे के सवाल सबसे पहले आते हैं; तथ्य और कथ्य के विश्वसनीय, प्रामाणिक, निश्पक्ष और जनहितकारी होने का प्रश्न बहुत बाद में उठाया जाता है। एक ही समय में एक ही घटना के अलग-अलग दृष्टांत और अनगिनत व्याख्याएँ हैं। पाठक-वर्ग को चालाकीपूर्वक बरगलाने में इन प्रस्तुतियों का हाथ ज्यादा है, दिमाग का इस्तेमाल करना अधिसंख्य सम्पादकों ने लगभग बंद कर दिया है। चंद मनस्वी सम्पादक अपनी जिद और धुन के धनी हैं। पत्रकारिता इन्हीं के पास भूखी-प्यासी बची है। बाकी जगहों पर मरणासन्न

हैं या कि बिक जाने अथवा बंद हो जाने को मजबूर हैं।

संस्करणसेवी ज्यादातर अख़बार समाचार के नाम पर जिन बातों को छाप अथवा परोस रहे हैं; उसे सम्पादक नहीं बल्कि दूसरे लोग तय कर रहे हैं। सम्पादक की अपनी खुद की वैचारिकी पर ग्रहण लग चुका है। सरकारी रिपोर्ट की भाषा में हो रही पत्रकारिता की विश्वसनीयता संदिग्ध ही नहीं, आपराधिक भी है। पन्ने रंगीन और छपाई आकर्षक जरूर हो गए हैं लेकिन विचार व दृष्टि नदारद है। जनपक्षधर सूचनाओं एवं घटनाओं को आज की पत्रकारिता हाशिए पर धकेलने का काम इरादतन कर रही है। वह उन मुद्दों और बातों पर सारा बल कूट रही है जिनका इतिहास–बोध और जन–स्मृति से कोई लेना–देना नहीं है। मौजूदा यथार्थ भी सच को बरगालने ख़ातिर नाना तरीके के विभ्रम पैदा कर रहा है, कुचक्र रच रहा है। छल–छद्म से भरा पत्रकारिता का यह दौर सामाजिक लगाववृत्ति और आपसी सहोदरपन को नष्ट–विनष्ट करने पर तुला है।

गाँधीजी के सत्य और अहिंसा से अनुप्राणित गंगा–जमुनी तहजीब की बात करना बेकार है। पत्रकारिता अपने उद्देश्य से भटकी हुई मूल्यहीन महफ़ीलों में विचरण कर रही है। समाचार–पत्र हैं लेकिन उनकी आत्मा गायब है। यानी समाचार–मूल्य, निष्पक्षता, वस्तुनिष्ठता, यथार्थता इत्यादि जैसे सवालों पर अब बल कम है जिस कारण पत्रकारिता स्तरहीन तथा अगम्भीर होती जा रही है। सियासी गठजोड़ और लाभ–हानि के समीकरण ने पत्रकारिता के गले में फांस डाल रखा है। समाचार–पत्र की प्रतिष्ठा को पूँजी के दावेदार निलाम करने पर तुले हैं। ऐसा क्यों हैं, इसका कारण अनेक है। 'जिन ढूँढा तिन पाइयाँ' की नियत हो, तो उत्तर मिलेंगे। समुचित और सम्यक् जवाब हासिल होंगे।

गाँधीजी का स्मरण इन अर्थ–सन्दर्भों में अनिवार्य है। उनकी भूमिका की तलाश की जानी चाहिए। स्वतन्त्रतापूर्व के दिनों में उन्होंने पत्रकारिता में उच्चतर मूल्य गढ़े। जनपक्षधरता की मानक कसौटी बनायी। पत्रकारिता की मर्यादा तय की। पत्र एवं पत्र–सम्पादकों की जवाबदेहियों को गरिमामय आचरण का हिस्सा बनाया। पत्रकारीय चेतना से लैस लोगों में दायित्व–निवर्हन का स्थूल–सूक्ष्म विवेक जगाने का काम गाँधीजी ने बखूबी किया। यह सब हो सका, क्योंकि गाँधीजी स्वयं भी पत्रकार थे। यह और बात है, उनका

राजनीतिक–सामाजिक व्यक्तित्व विराट है, लेकिन इस विशालता में उनकी सम्पादकीय कुशलता और पत्रकारीय कौशल शामिल है।

उनकी खुद की स्वीकृति गौरतलब है–'यदि मैं राजनीति में नहीं होता, तो निश्चित कहता हूँ मैं पत्रकार होता।' गाँधीजी पत्रकारिता के सूत्रधार हैं, अगुवा या अग्रदूत हैं; यह सब कहना उनके योगदान का परिसीमन करना होगा। दरअसल, गाँधीजी जननायक की छवि में पत्रकारिता के असल योद्धा थे जिन्होंने कागज और कलम का डोर थामा, तो उनके पत्रकारीय ओज एवं हुंकार से तत्कालिन पत्र–पत्रिकाओं में नई स्फूर्ति का संचार हुआ; स्वाधीनता आन्दोलन की दिशा स्पष्ट हुई तथा जनमानस में वे सर्वस्वीकार्य सिद्ध हुए। वस्तुनिष्ठता और यथार्थता जो कि पत्रकारिता की आधारशिला है, उसमें गाँधीजी कभी डिगे नहीं। उन्होंने हर विषय पर अपना मत रखते हुए जनमत–निर्माण की राह में नयी लकीर खींचने का सफल प्रयास किया।